श्रीमद् आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ति विरचित

लब्धिसार

प्रथमोपशम सम्यक्त्व अधिकार

Presentation Developed By: Smt Sarika Vikas Chhabra

अंतोकोडाकोडीठिदिं असत्थाण सत्थगाणं च ।
विचउट्ठाणरसं च य, बंधाणं बंधणं कुणई ॥24॥

- अन्वयार्थ:- सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि (बंधाणं) बध्यमान प्रकृतियों का (अंतोकोडाकोडीठिदिं) अंत:कोटाकोटी सागरोपमप्रमाण स्थितिबंध (च य) और
- (असत्थाण सत्थगाणं च विचउट्ठाणरसं बंधणं) अप्रशस्त प्रकृतियों का द्विस्थानीय अनुभागबंध और प्रशस्त प्रकृतियों का चतु:स्थानीय अनुभागबंध (कुणई) करता है ॥24॥

www.JainKosh.org

प्रायोग्य लब्धि में स्थिति, अनुभाग बंध

अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध	• द्विस्थानीय
प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध	• चतु:स्थानीय
बध्यमान प्रकृतियों का स्थितिबंध	• अंत:कोटाकोटी सागर

स्थिति, अनुभाग बंध का घटना

अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध प्रत्येक समय अनंतगुणा घटता है ।

प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध प्रत्येक समय अनंतगुणा बढ़ता है ।

सभी प्रकृतियों का स्थितिबंध प्रत्येक अंतर्मुहूर्त में पल्य/संख्यात घटता है ।

मिच्छणथीणति सुरचउ, समवज्जपसत्थगमणसुभगतियं ।
णीचुक्कस्सपदेसमणुक्कस्सं वा पबंधदि हु ॥25॥

- अन्वयार्थ:- (मिच्छणथीणति) मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धि-चतुष्क, स्त्यानगृद्धि-त्रिक (सुरचउ) देव-चतुष्क (समवज्जपसत्थगमण-सुभगतिय) समचतुरस्र संस्थान, वज्रवृषभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग-त्रिक, (णीच) और नीचगोत्र का (उक्कस्सपदेसं) उत्कृष्ट प्रदेशबंध (वा) अथवा (अणुक्कस्सं) अनुत्कृष्ट (पबंधदि हु) प्रदेशबन्ध करता है ॥25॥

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि को संभव प्रदेशबंध

मिथ्यात्व

अनन्तानुबन्धी 4

स्त्यानगृद्धि-3

देव-चतुष्क

समचतुरस्र संस्थान

वज्रवृषभनाराच संहनन

प्रशस्त विहायोगति

सुभग-त्रय

नीच गोत्र

इन 19 प्रकृतियों का उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध करता है।

www.JainKosh.org

एदेहिं विहीणाणं, तिण्णि महादंडएसु उत्ताणं ।
एक्कट्ठिपमाणाणम-णुक्कस्सपदेसबंधणं कुणई ॥26॥

- अन्वयार्थ:- (एदेहिं विहीणाणं) पूर्वोक्त 19 प्रकृतियों से रहित (तिण्णि महादंडएसु उत्ताणं) तीन महादंडक में (गाथा क्र. 21, 22, 23) कही गयी (एक्कट्ठिपमाणाणं) 61 प्रकृतियों का (अणुक्कस्सपदेसबंधणं) अनुत्कृष्ट प्रदेशबन्ध (कुणई) करता है ॥26॥

प्रायोग्य लब्धि में प्रदेश बंध

3 महादंडकों में कही गयी 80 में से शेष (80–19=) 61 प्रकृतियों का अनुत्कृष्ट ही प्रदेश बंध करता है ।

19 प्रकृतियाँ

उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध

61 प्रकृतियाँ

अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध

प्रायोग्य लब्धि में प्रदेश बंध

इन 61 में से ज्ञानावरण आदि 38 प्रकृतियों का उत्कृष्ट प्रदेश बंध तो सम्यग्दृष्टि जीव ही करता है । उनका तो मिथ्यात्व गुणस्थान में सामान्यतया भी अनुत्कृष्ट ही प्रदेश बंध होता है ।

शेष मनुष्य गति आदि 23 प्रकृतियों का उत्कृष्ट प्रदेश बंध यद्यपि मिथ्यादृष्टि करता है, तथापि यहाँ उनके उत्कृष्ट बंध की पूर्ण सामग्री नहीं होने से इन 23 प्रकृतियों का उत्कृष्ट प्रदेश बंध नहीं करता है, अनुत्कृष्ट ही करता है ।

पढमे सव्वे विदिये, पण तदिये चउ कमा अपुणरुत्ता ।
इदि पयडीणमसीदी, तिदंडएसु वि अपुणरुत्ता ॥27॥

- अन्वयार्थ:- (पढमे सव्वे) प्रथम महादण्डक की सभी प्रकृतियाँ (विदिये पण) दूसरे महादण्डक में पाँच प्रकृतियाँ, (तदिये चउ) तीसरे महादण्डक में चार प्रकृतियाँ (कमा) क्रम से (अपुणरुत्ता) अपुनरुक्त हैं।
- (इदि) इस प्रकार (तिदंडएसु वि) उन तीन दण्डक में मिलकर (पयडीणमसीदी) 80 प्रकृतियाँ (अपुणरुत्ता) अपुनरुक्त हैं ॥27॥

www.JainKosh.org

तीन महादंडक

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि जीव जितनी प्रकृतियों को बांधता है उसका कथन तीन महादंडक के द्वारा किया गया है।

प्रथम महादण्डक

- मनुष्य और तिर्यंचों में बंध-योग्य प्रकृतियों का कथन है। (71)

द्वितीय महादण्डक

- देव और प्रथम छह पृथ्वियों के नारकियों की बंध-योग्य प्रकृतियों का कथन है। (अतिरिक्त 5)

तृतीय महादण्डक

- सातवीं पृथ्वी के नारकियों की बंध-योग्य प्रकृतियों का वर्णन है। (अतिरिक्त 4)

कुल प्रकृति = 71 + 5 + 4 = 80

3 महादंडकों की अपुनरुक्त 80 प्रकृतियाँ

दूसरे और तीसरे दंडक में जो ज्ञानावरण आदि प्रकृतियाँ बध्यमान हैं, उन्हें प्रथम दंडक की 71 प्रकृतियों में गिना जा चुका है । इसलिए उन्हें पुनः नहीं गिना है ।

दूसरे दंडक में मनुष्य-2, औदारिक-2, वज्रवृषभनाराच संहनन ये पाँच प्रकृतियाँ प्रथम दंडक में नहीं थी । इसलिए इन्हें अपुनरुक्त प्रकृतियों की गणना में शामिल किया ।

इसी प्रकार तीसरे दंडक में तिर्यंच-2, उद्योत, नीच गोत्र – ये चार प्रकृतियाँ प्रथम दंडक में नहीं थी । इसलिए इन्हें अपुनरुक्त प्रकृतियों की गणना में शामिल किया ।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव के बंध की स्थिति

प्रकृति बंध	मनुष्य, तिर्यंच गति	देव, नरक	7वां नरक
	71	72	72, 73
स्थिति बंध	सभी प्रकृतियों का अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण		
अनुभाग बंध	घाति कर्म –	लता, दारु रूप द्विस्थानीय	
	अघाति पापकर्म–	निंब, कांजीर रूप द्विस्थानीय	
	अघाति पुण्यकर्म –	गुड़, खांड, शर्करा, अमृत रूप चतु:स्थानीय	
प्रदेश बंध	19 प्रकृतियों का	उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट बंध	
	61 प्रकृतियों का	अनुत्कृष्ट बंध	

उदये चोद्दसघादी, णिद्दापयलाणमेक्कदरगं तु ।
मोहे दसतिय णामे, वचिठाणं सेसगे सजोगेक्कं ॥28॥

- अन्वयार्थ:- प्रथमोपशम सम्यक्त्व के सम्मुख विशुद्ध मिथ्यादृष्टि के (उदये) उदय में
- (चोद्दस घादी) तीन घातिया कर्मों की 14 प्रकृतियाँ
- (णिद्दापयलाणमेक्कदरगं तु) निद्रा और प्रचला में से कोई एक
- (मोहे दसतिय) मोहनीय की दशत्रिक अर्थात् 10-9-8 प्रकृतियाँ
- (णामे वचिठाणं) नामकर्म की भाषा-पर्याप्तिकाल में उदय योग्य होने वाली 29-30-31 प्रकृतियाँ
- (सेसगे सजोगेक्कं) शेष कर्मों की (आयु, गोत्र व वेदनीय की) स्वयोग्य एक-एक प्रकृति है ॥28॥

www.JainKosh.org

स्थान

एक समय में एक जीव को संख्या भेदों की अपेक्षा से जो प्रकृतियों का समूह प्राप्त होता है उसे स्थान कहते हैं।

भंग

समान संख्या वाले स्थानों में जो प्रकृतियों का परिवर्तन होता है, उसे भंग कहते हैं।

जैसे - एक नारकी जीव को 55 प्रकृतियों का उदय होने से 55 प्रकृतियों का एक स्थान हुआ।
उन 55 प्रकृतियों का उदय कषाय, हास्य-युगल और वेदनीय का बदल करने से अलग-अलग 16 प्रकार से संभव होने से 16 भंग हुए।

नरक गति में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव के प्रकृतियों का उदय

ज्ञानावरण	5
दर्शनावरण	4
अंतराय	5
मोहनीय	8 या 9 या 10
नाम	29
आयु	1 नरकायु
गोत्र	1 नीच
वेदनीय	साता या असाता
कुल उदय प्रकृति	= 54 या 55 या 56

इनमें मोहनीय के 8 प्रकृतिक उदयस्थान का कूट इस प्रकार है-

भय-जुगुप्सा	-	
हास्य-2, अरति-2	2 2	2 ×
वेद	1	1 ×
कषाय	4 4 4 4	4 ×
मिथ्यात्व	1	1 ×
		8 भंग

ये सभी साता वेदनीय और असाता वेदनीय के साथ होते हैं।

अतः साता के 8 और असाता के 8 मिलाकर 16 भंग होते हैं।

इसी प्रकार 9 प्रकृतिक स्थान का कूट इस प्रकार बनता है

भय-जुगुप्सा	1		1		2 ×
हास्य-2, अरति-2	2		2		2 ×
वेद		1			1 ×
कषाय	4	4	4	4	4 ×
मिथ्यात्व		1			1 ×
					16 भंग

ये सभी साता वेदनीय और असाता वेदनीय के साथ होते हैं ।

अतः 16 और 16 मिलाकर 32 भंग हो जाते हैं ।

इसी प्रकार 10 प्रकृतिक स्थान का कूट इस प्रकार बनता है -

भय-जुगुप्सा	2	1 ×
हास्य-2, अरति-2	2 2	2 ×
वेद	1	1 ×
कषाय	4 4 4 4	4 ×
मिथ्यात्व	1	1 ×
		8 भंग

ये सभी साता वेदनीय और असाता वेदनीय के साथ होते हैं ।

अत: 8 और 8 मिलाकर 16 भंग हो जाते हैं ।

नरक गति में उदयस्थान एवं भंग

शेष नाम कर्म, गोत्र कर्म, आयु कर्म आदि में कोई भंग नहीं बनते ।

उनके एक-एक ही प्रकार से उदय पाया जाता है ।

इस तरह नरक गति में उदय प्रकृतियों की उदय-संख्या एवं भंग इस प्रकार हुए –

उदयस्थान	54	55	56
भंग	16	32	16

www.jainkosh.org

तिर्यंचगति में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

नारकी को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

54, 55, 56

संहनन

+ 1

कुल

= 55, 56, 57

तिर्यंच गति में संहनन का उदय भी पाया जाता है इसलिए यहाँ 1 प्रकृति जोड़ी है।

तिर्यंचगति में मोहनीय के उदयस्थान

8 प्रकृतिक स्थान

- यहाँ तीनों वेद का उदय होने से मोहनीय के भंग 24 होते हैं –

भय-जुगुप्सा	0				-
हास्य-2, अरति-2	2		2		2 ×
वेद	1	1	1		3 ×
कषाय	4	4	4	4	4 ×
मिथ्यात्व	1				1 ×
					24 भंग

9 प्रकृतिक स्थान

- इसी प्रकार भय सहित के 24, जुगुप्सा सहित के 24 भंग होने से मोहनीय के 9 प्रकृतिक स्थान में 48 भंग होते हैं ।

10 प्रकृतिक स्थान

- इसी प्रकार भय-जुगुप्सा सहित के 10 प्रकृतिक उदयस्थान में 24 भंग होते हैं ।

www.JainKosh.org

नामकर्म के 30 प्रकृतिक उदयस्थान में संभव भंग

यश	1			1			2 ×
स्वर	1			1			2 ×
आदेय	1			1			2 ×
सुभग	1			1			2 ×
विहायोगति	1			1			2 ×
संहनन	1	1	1	1	1	1	6 ×
संस्थान	1	1	1	1	1	1	6 ×
							1152 भंग

साता व असाता के बदलने से वेदनीय के दो भंग होते हैं ।

इस तरह 55 प्रकृतिक उदयस्थान के भंग

- मोहनीय के भंग × नामकर्म के भंग × वेदनीय के भंग
- 24 × 1152 × 2 = 55,296

56 प्रकृतिक उदयस्थान के भंग

- मोहनीय के भंग × नामकर्म के भंग × वेदनीय के भंग
- 48 × 1152 × 2 = 1,10,592

57 प्रकृतिक उदयस्थान के भंग

- 24 × 1152 × 2 = 55,296

इन्हीं तीन स्थानों में उद्योत प्रकृति का उदय मिलाने से उदयस्थान 56, 57, 58 के बनेंगे । भंगों की संख्या पूर्ववत् रहेगी ।

www.JainKosh.org

तिर्यंच गति में उदयस्थान एवं भंग

उद्योत रहित

उदयस्थान	55	56	57
भंग	55,296	1,10,592	55,296

उद्योत सहित

उदयस्थान	56	57	58
भंग	55,296	1,10,592	55,296

www.JainKosh.org

मनुष्य गति में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

उदयस्थान	55	56	57
भंग	1,10,592	2,21,184	1,10,592

जो तिर्यंच गति में 55, 56, 57 प्रकृतिक उदयस्थान हैं, वे ही मनुष्य गति में भी हैं ।

तिर्यंच गति में उद्योत सहित जो 56, 57, 58 का उदयस्थान है, वह मनुष्य गति में नहीं है ।

मनुष्य गति में उच्च और नीच दोनों गोत्र होते हैं, जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख हो सकते हैं । इसलिए तिर्यंच गति के प्रत्येक उदयस्थान के भंगों से मनुष्य गति के भंग दुगुने हैं क्योंकि यहाँ गोत्र कर्म दो भंग होते हैं ।

www.JainKosh.org

देव गति में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

देवगति में नरक गति की तरह उदयस्थान हैं । परंतु

1) नामकर्म की अप्रशस्त प्रकृतियों के स्थान पर प्रशस्त प्रकृतियों का उदय होता है ।

2) नीच गोत्र के स्थान पर उच्च गोत्र का उदय होता है ।

3) मोहनीय में नपुंसक वेद के स्थान पर पुरुषवेद और स्त्रीवेद उदययोग्य होते हैं ।

4) वेद में दो वेद संभव होने से भंग दुगुने होते हैं ।

उदयस्थान	54	55	56
भंग	32	64	32

यथा 8 प्रकृतिक उदयस्थान इस प्रकार बनेगा-

यहाँ मोहनीय के भंग 16 होते हैं -		
भय-जुगुप्सा	0	-
हास्य-2, अरति-2	2 2	2 ×
वेद	1 1	2 ×
कषाय	4 4 4 4	4 ×
मिथ्यात्व	1	1 ×
		16 भंग

ये नारकियों में कहे गये 8 भंगों से दुगुने भंग हैं ।

इसी प्रकार तीनों उदय-स्थानों में दुगुने भंग जानना चाहिये ।

निद्रा, प्रचला सहित उदयस्थान

पूर्वोक्त ये सारे उदयस्थान निद्रा, प्रचला से रहित कहे गये हैं ।

निद्रा या प्रचला का उदय होने पर 1-1 प्रकृति बढ़ती है ।

इन सभी के भंग दुगुने हो जाते हैं, क्योंकि निद्रा के साथ उदय, प्रचला के साथ उदय — इस प्रकार दो विकल्प होते हैं ।

निद्रा, प्रचला के साथ उदयस्थान एवं भंग

गति				
नरक गति	उदयस्थान	55	56	57
	भंग	32	64	32
तिर्यंच गति (उद्योत रहित)	उदयस्थान	56	57	58
	भंग	1,10,592	2,21,184	1,10,592
तिर्यंच गति (उद्योत सहित)	उदयस्थान	57	58	59
	भंग	1,10,592	2,21,184	1,10,592
मनुष्य गति	उदयस्थान	56	57	58
	भंग	2,21,184	4,42,368	2,21,184
देव गति	उदयस्थान	55	56	57
	भंग	64	128	64

उदयिल्लाणं उदये, पत्तेक्कठिदिस्स वेदगो होदि ।
विचउट्ठाणमसत्थे, सत्थे उदयिल्लरसभुत्ती ॥29॥

- अन्वयार्थ :- (उदयिल्लाणं) उदय वाली प्रकृतियों का (उदये पत्ते) उदय प्राप्त होने पर (एक्कठिदिस्स) एक स्थिति का (वेदगो) भोक्ता (होदि) होता है ।
- (असत्थे सत्थे विचउट्ठाणं) अप्रशस्त प्रकृतियों के द्विस्थानरूप और प्रशस्त प्रकृतियों के चतु:स्थानरूप (उदयिल्लरसभुत्ती) उदय वाले अनुभाग को भोगता है ॥29॥

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव के स्थिति और अनुभाग का उदय

स्थिति-उदय

- एक स्थिति का वेदक

अनुभाग-उदय

- घाती कर्म – द्विस्थानीय वेदक
- अघाती कर्म – पाप प्रकृति – द्विस्थानीय वेदक
- अघाती कर्म – पुण्य प्रकृति – चतु:स्थानीय वेदक

अजहण्णमणुक्कस्सं, पदेसमणुभवदि सोदयाणं तु ।
उदयिल्लाणं पयडि-चउक्काणमुदीरगो होदि ॥30॥

- अन्वयार्थ:- वह विशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीव (सोदयाणं तु) उदयसहित प्रकृतियों के (अजहण्णमणुक्कस्सं पदेसं) अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेश का (अणुभवदि) अनुभव करता है ।
- (उदयिल्लाणं) उदय-स्वरूप प्रकृतियों का (पयडिचउक्काणं) प्रकृति-चतुष्क अर्थात् प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश का (उदीरगो) उदीरक (उदीरणा करने वाला) (होदि) होता है ॥30॥

www.JainKosh.org

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव के प्रदेश-उदय

- प्रकृत में उदयवाली प्रकृतियों के अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेश-उदय होता है ।
- अर्थात् मध्यम प्रदेश-उदय होता है । ना जघन्य होता है, ना उत्कृष्ट होता है ।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव को उदीरणा

- जिन-जिन प्रकृतियों का उदय चल रहा है, उन-उन प्रकृतियों की उदीरणा भी होती है ।

उदीरणा

अपक्व कर्म को उदयावली में प्राप्त कराने को उदीरणा कहते हैं ।

उदयावली के बाहर स्थित कर्म द्रव्य को अपकर्षण के द्वारा उदयावली में मिलाने को उदीरणा कहते हैं ।

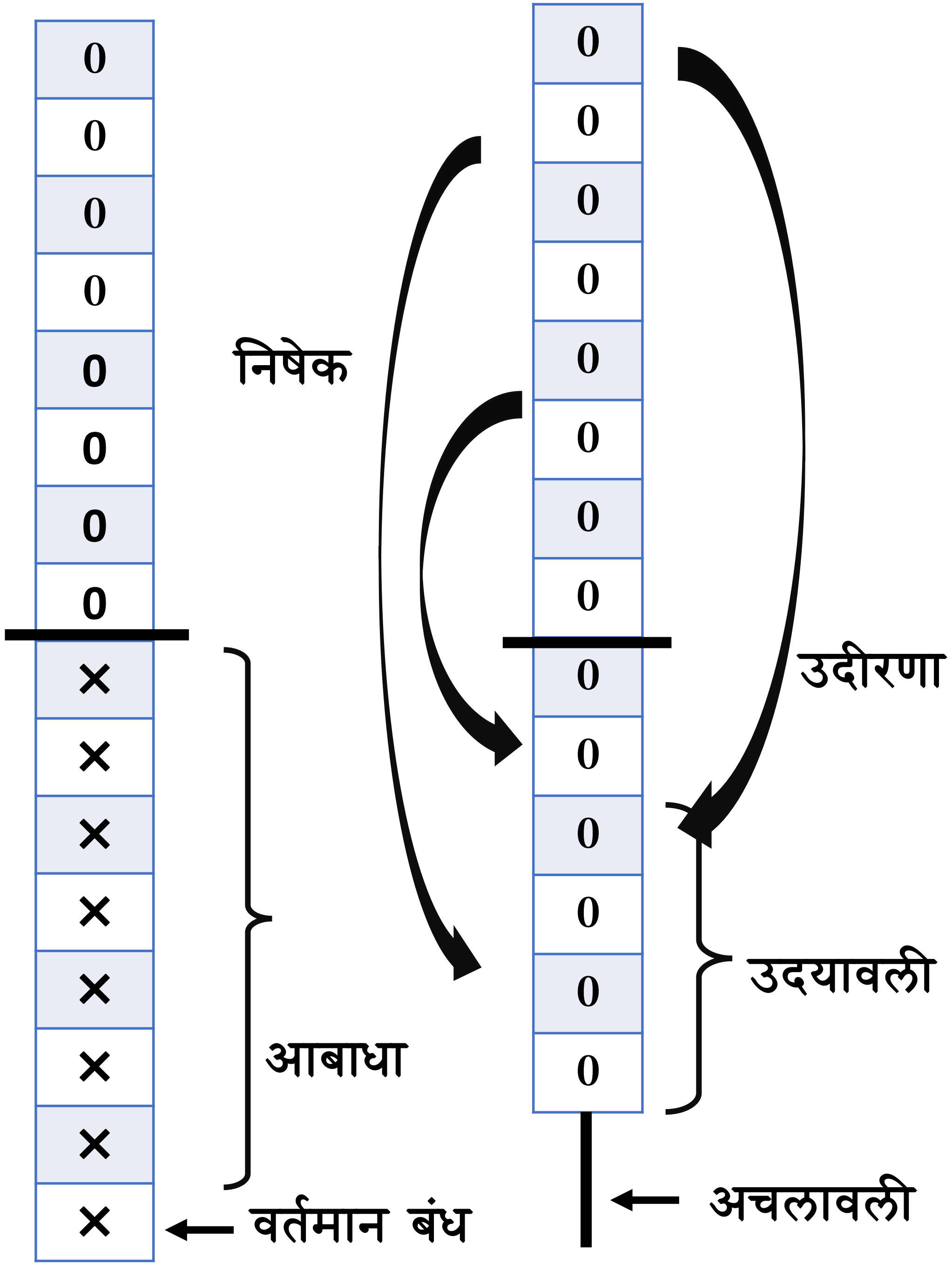

दुति आउ तित्थहारचउक्कूणा सम्मगेण हीणा वा । मिस्सेणूणा वा वि य, सव्वे पयडी हवे सत्तं ॥31॥

- अन्वयार्थ:- (दुति आउ) दो अथवा तीन आयु (तित्थहारचउक्कूणा) तीर्थंकर और आहारक-चतुष्क – इन प्रकृतियों से रहित (सम्मगेण हीणा) सम्यक्त्व प्रकृति से रहित (वा) अथवा (मिस्सेणूणा वि य) मिश्र प्रकृति से भी रहित (सव्वे पयडी) सर्व प्रकृतियों का (सत्तं) सत्त्व (हवे) होता है ॥31॥

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव के संभव सत्त्व-प्रकृतियाँ

असत्त्व प्रकृति	बद्धायुष्क	अबद्धायुष्क
दो आयु आहारक-4 तीर्थंकर = 7	148 – 7 = 141	141 – 1 आयु = 140
सम्यक्त्व की उद्वेलना हो जाने पर	141 – 1 सम्यक्त्व = 140	140 – 1 आयु = 139
मिश्र की उद्वेलना हो जाने पर	140 – 1 मिश्र = 139	139 – 1 आयु = 138
ये सभी स्थान सादि मिथ्यादृष्टि को संभव हैं ।		

अनादि मिथ्यादृष्टि के संभव सत्त्व

गति और आयु बंध की अपेक्षा यहाँ भंग भी बनाए जा सकते हैं ।

बद्धायुष्क	अबद्धायुष्क
139 प्रकृतिक	138 प्रकृतिक

घटायी गयी प्रकृतियाँ

तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला जीव यदि मिथ्यात्व को प्राप्त करे तो अंतर्मुहूर्त में ही पुनः सम्यक्त्व प्राप्त कर लेता है । यह सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व होता है, प्रथमोपशम नहीं । इसलिए तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व घटाया है ।

किसी भी जीव को अधिकतम 2 आयु का ही सत्त्व हो सकता है – भुज्यमान आयु और बध्यमान आयु । अतः दो प्रकृतियाँ घटाई है ।

घटायी गयी प्रकृतियाँ

अबद्धायुष्क के तीन आयु का सत्त्व नहीं होने से, बद्धायुष्क की अपेक्षा एक और प्रकृति घटायी है । अबद्धायुष्क के केवल भुज्यमान आयु की ही सत्ता है ।

यदि किसी सम्यग्दृष्टि ने आहारक-4 बांधी है, तो वह आहारक-4 की उद्वेलना करके ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व के योग्य होता है । आहारक-4 की सत्ता वाला मिथ्यादृष्टि जीव यदि पुनः सम्यक्त्व प्राप्त करे, तो वेदक सम्यक्त्व ही प्राप्त करता है, प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं । इसलिए इन 4 प्रकृतियों का सत्त्व घटाया है ।

प्रश्न—उद्वेलना क्या होती है ?

उत्तर—उद्वेलना; संक्रमण का एक प्रकार है ।

अध:प्रवृत्तादि तीन करण के बिना ही

उद्वेलन प्रकृतियों के परमाणुओं को उद्वेलन भागहार का भाग देकर एक भाग कर्म परमाणु अन्य प्रकृतिरूप परिणमित होते हैं,

उसे उद्वेलना संक्रमण कहते हैं ।

उद्वेलना के द्वारा वह प्रकृति पल्य/असंख्यात प्रमाण काल में पूर्णरूप से संक्रमित होकर सत्त्व में नहीं रहती ।

अजहण्णमणुक्कस्सं, ठिदित्तियं होदि सत्तपयडीणं ।
एवं पयडिचउक्कं, बंधादिसु होदि पत्तेयं ॥32॥

- अन्वयार्थ:- (सत्तपयडीणं) सत्त्व प्रकृतियों का (ठिदित्तियं) स्थितित्रिक अर्थात् स्थिति, अनुभाग व प्रदेश (अजहण्णमणुक्कस्सं) अजघन्य-अनुत्कृष्ट होता है ।
- (एवं) इस प्रकार (बंधादिसु) बन्धादि में (बंध, उदय, उदीरणा और सत्त्व में) (पत्तेयं) प्रत्येक का (पयडिचउक्कं) प्रकृति चतुष्क (प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश) (होदि) होता है ॥32॥

www.JainKosh.org

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख जीव को सत्त्व-प्रकृतियों का स्थिति-अनुभाग और प्रदेश सत्त्व

स्थिति-सत्त्व	आयु को छोड़कर 7 कर्मों का: अजघन्य-अनुत्कृष्ट अंत:कोटाकोटी सागर
अनुभाग-सत्त्व	अजघन्य-अनुत्कृष्ट पाप-प्रकृतियों का द्विस्थानीय पुण्य-प्रकृतियों का चतु:स्थानीय
प्रदेश-सत्त्व	अजघन्य-अनुत्कृष्ट

इस प्रकार बंध, उदय, उदीरणा, सत्त्व में प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश – इन चारों का कथन किया ।

इस प्रकार की योग्यता प्रायोग्य लब्धि के अंतिम समय तक जानना चाहिए ।

तत्तो अभव्वजोग्गं, परिणामं बोलिऊण भव्वो हु ।
करणं करेदि कमसो, अधापवत्तं अपुव्वमणियट्टि ॥33॥

- अन्वयार्थ:- (तत्तो) उसके बाद अर्थात् प्रायोग्य-लब्धि के बाद (अभव्वजोग्गं परिणामं) अभव्य के योग्य परिणामों को (बोलिऊण) लांघकर
- (भव्वो हु) भव्य जीव (कमसो) क्रमश: (अधापवत्तं अपुव्वमणियट्टिकरणं) अध:प्रवृत्त, अपूर्व और अनिवृत्तिकरण (करेदि) करता है ॥33॥

अभव्य के योग्य 4 लब्धियों में होने वाले

विशुद्ध परिणामों को लांघ कर क्रम से

अध:प्रवृत्त करण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणरूप

विशुद्ध परिणाम करता है ।

www.JainKosh.org

करण किसे कहते हैं?

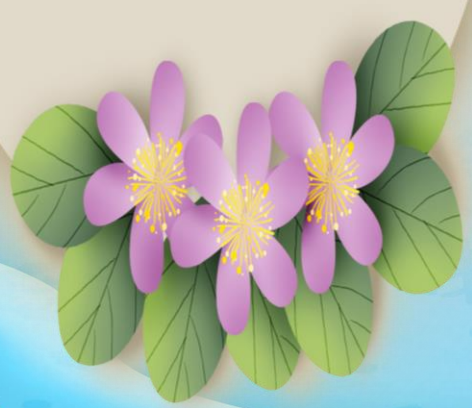

जिन परिणाम विशेषों के द्वारा

दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के

उपशमादिरूप विवक्षित भाव उत्पन्न किए जाते हैं

उन परिणामों को करण कहते हैं।

अंतोमुहुत्तकाला, तिण्णि वि करणा हवंति पत्तेयं ।
उवरीदो गुणियकमा, कमेण संखेज्जरूवेण ॥34॥

- अन्वयार्थ:- (तिण्णि वि करणा) तीनों ही करण (पत्तेयं) प्रत्येक (अंतोमुहुत्तकाला) अंतर्मुहूर्तकाल प्रमाण (हवंति) होते हैं।
- (उवरिदो) ऊपर से (कमेण) क्रम से (संखेज्जरूवेण) संख्यातरूप से (गुणियकमा) गुणित क्रम है ॥34॥

प्रत्येक करण का काल

करण	संदृष्टि	अंक संदृष्टि
अध:प्रवृत्तकरण	2 २ २ २	16
अपूर्वकरण	2 २ २	8
अनिवृत्तिकरण	2 २	4

सबसे कम अनिवृत्तिकरण का काल है ।

उससे संख्यात गुणा अपूर्वकरण का काल है ।

उससे संख्यात गुणा अध:प्रवृत्तकरण का काल है ।

प्रत्येक करण का काल अंतर्मुहूर्त है ।

तीनों का काल मिलकर भी अंतर्मुहूर्त मात्र है ।

जम्हा हेट्ठिमभावा, उवरिमभावेहिं सरिसगा होंति ।
तम्हा पढमं करणं, अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठं ॥35॥

- अन्वयार्थ:- (जम्हा) जिस कारण से (हेट्ठिमभावा) नीचले समयवर्ती जीवों के परिणाम (उवरिमभावेहिं) उपरिम समयवर्ती जीवों के परिणामों के (सरिसगा) सदृश (होंति) होते हैं, (तम्हा) उस कारण से (पढमं करणं) प्रथम करण को (अधापवत्तो त्ति) अधःप्रवृत्त (णिद्दिट्ठं) कहते हैं ॥35॥

समए समए भिण्णा, भावा तम्हा अपुव्वकरणो हु ।
अणियट्टी वि तहं चि य, पडिसमयं एक्कपरिणामो ॥36॥

- अन्वयार्थ:- जिस कारण (समए समए) प्रत्येक समय में (भिण्णा भावा) भिन्न-भिन्न परिणाम होते हैं (तम्हा) उस कारण (अपुव्वकरणो हु) वह अपूर्वकरण है ।
- (तहं चिय) उसी प्रकार (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (एक्क परिणामो) एक परिणाम होता है इसलिए (अणियट्टि) वह अनिवृत्तिकरण है ॥36॥

तीन करण

अधःप्रवृत्तकरण	• जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम समान भी हो सकते हैं और भिन्न भी हो सकते हैं ।
अपूर्वकरण	• जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न ही होते हैं ।
अनिवृत्तिकरण	• जहाँ समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान ही होते हैं ।

तीन करण एक जीव की अपेक्षा हैं या नाना जीवों की अपेक्षा?

ये तीनों करण नाना जीवों की अपेक्षा से कहे जाते हैं ।

एक जीव की अपेक्षा तो प्रतिसमय अनंतगुणा-अनंतगुणा विशुद्ध परिणाम ही होते हैं।

त्रैकालिक अनंत जीवों के परिणामों को देखकर उनमें पायी जाने वाली सदृशता-असदृशता को इन तीन करणों द्वारा बताया जाता है।

गुणसेढी गुणसंकम, ठिदिरसखंडं च णत्थि पढमम्हि ।
पडिसमयमणंतगुणं, विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु ॥37॥

- अन्वयार्थ:- (पढमम्हि) प्रथम अध:प्रवृत्त करण में (गुणसेढी) गुणश्रेणी (गुणसंकम) गुणसंक्रमण (च) और (ठिदिरसखंडं च) स्थितिकाण्डकघात, अनुभागकाण्डकघात (णत्थि) नहीं होते हैं ।
- पुन: (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अणंतगुणं) अनन्तगुणी (विसोहिवड्ढीहिं) विशुद्धि की वृद्धि से (वड्ढदि हु) बढ़ते हैं ॥37॥

अध:प्रवृत्तकरण में नहीं होने वाले कार्य

- गुणश्रेणी
- गुणसंक्रमण
- स्थिति कांडक घात
- अनुभाग कांडक घात

शंका :- अधःप्रवृत्तकरण में स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात क्यों नहीं होते हैं?

समाधान :- अधःप्रवृत्तकरण में प्रत्येक समय में अनन्तगुणी विशुद्धि से अत्यन्त विशुद्ध होने पर भी स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात के योग्य विशुद्धि नहीं होती है।

इसलिए अधःप्रवृत्तकरण में स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात नहीं होते हैं।

अधःप्रवृत्तकरण के 4 आवश्यक

- प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ना
- स्थितिबंधापसरण
- पाप प्रकृतियों का अनुभाग-बंधापसरण
- पुण्य प्रकृतियों का बढ़ता हुआ अनुभाग बंध

इन चारों आवश्यकों में से

जीव में होने वाला एकमात्र आवश्यक

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि

शेष 3 आवश्यक

जीव के परिणामों के निमित्त से

नवीन बंधने वाले कर्मों में होते हैं।

सत्थाणमसत्थाणं, चउविट्ठाणं रसं च बंधदि हु । पडिसमयमणंतेण य, गुणभजियकमं तु रसबंधे ॥38॥

- अन्वयार्थ:- (सत्थाणमसत्थाणं चउविट्ठाणं रसं च बंधदि हु) प्रशस्त प्रकृतियों का चतुःस्थानीय और अप्रशस्त प्रकृतियों का द्विस्थानीय अनुभाग बांधता है (च) और
- (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अणंतेण गुणभजियकमं तु) प्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तगुणित क्रम से और अप्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तवाँ भाग क्रम से (रसबंधे) अनुभाग-बंध होता है ॥38॥

2nd आवश्यक

अनुभाग बंध बढ़ना

प्रतिसमय

प्रशस्त प्रकृतियों का

अनंत गुणा-अनंत गुणा

चतु:स्थानीय अनुभागबंध होता है ।

3rd आवश्यक

अनुभाग बंधापसरण

प्रतिसमय

अप्रशस्त प्रकृतियों का

अनंत गुणाहीन-अनंत गुणाहीन

द्विस्थानीय अनुभागबंध होता है ।

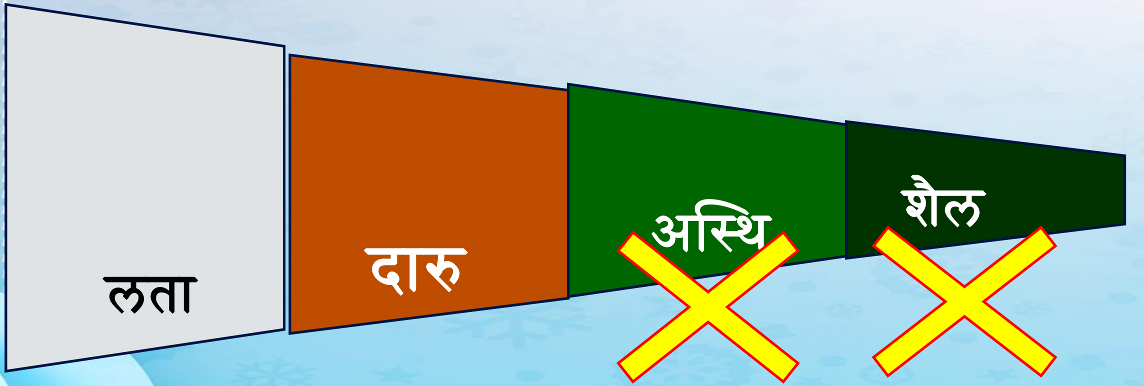

घातिया प्रकृति

अघातिया प्रकृति

www.JainKosh.org

पाप प्रकृतियों का नया अनुभाग बंध

घाति कर्म → लता | दारु

अघाति कर्म → निंब | कांजीर

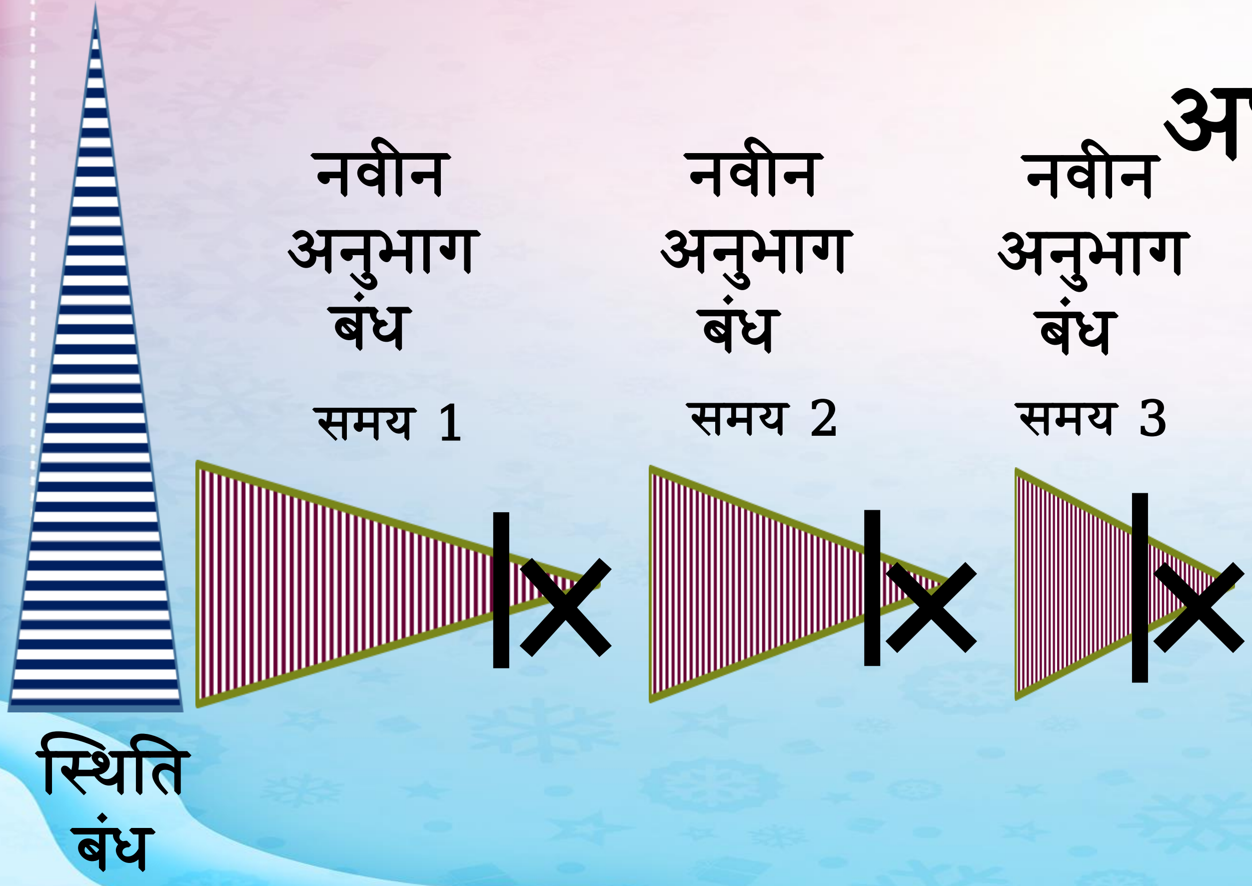

इन दो अनुभाग में भी प्रतिसमय अनंत गुणा हीन-हीन होकर अनुभाग बांधता है।

प्रश्न - प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध भी घट-घटकर क्यों नहीं होता ?

उत्तर - प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध विशुद्ध परिणामों से अधिक होता है,

संक्लेश भावों से कम होता है – ऐसा नियम है ।

यहाँ विशुद्धि बढ़ रही है ।

अतः प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागबंध बढ़ता ही है, घटता नहीं है ।

पल्लस्स संखभागं, मुहुत्तअंतेण ओसरदि बंधे ।
संखेज्जसहस्साणि य, अधापवत्तम्मि ओसरणा ॥39॥

- अन्वयार्थ :- (बंधे) स्थितिबंध में (मुहुत्तअंतेण) एक-एक अंतर्मुहूर्त के द्वारा (पल्लस्स संखभागं) पल्य का संख्यातवाँ भाग (ओसरदि) कम करता है ।
- इस प्रकार (अधापवत्तम्मि) अध:प्रवृत्तकरण में (संखेज्जसहस्साणि) संख्यात हजार (ओसरणा) स्थितिबंधापसरण होते हैं ॥39॥

4th आवश्यक

स्थिति बंधापसरण

बंधने वाले समस्त कर्मों की स्थिति

प्रत्येक अंतर्मुहूर्त में

पल्य का संख्यात भाग प्रमाण

घट-घटकर बंधती है,

उसे स्थितिबंधापसरण कहते हैं।

एक अंतर्मुहूर्त में 1 स्थितिबंधापसरण होता है, तो अधःप्रवृत्तकरण के अंतर्मुहूर्त में कितने बंधापसरण होंगे ?

$$\frac{1}{\text{बंधापसरण का अंतर्मुहूर्त}} \times \text{अधःप्रवृत्तकरण का अंतर्मुहूर्त}$$

$$\frac{1}{2\text{२}} \times 2\text{२२} = \text{२}$$

अधःप्रवृत्तकरण में संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण हो जाते हैं ।

दृष्टान्त

मानाकि 1 बंधापसरण 40 समय में होता है और

अध:प्रवृत्तकरण का काल = 400 समय है।

तो कुल कितने बंधापसरण होंगे ?

$$\frac{1}{40} \times 400 = 10$$

ऐसे ही वास्तविक गणित में हजारों स्थितिबंधापसरण अध:प्रवृत्तकरण में होते हैं ।

प्रश्न— एक स्थितिबंधापसरण एक अंतर्मुहूर्त में ही क्यों होता है? अनुभाग बंधापसरण की तरह प्रत्येक समय में क्यों नहीं होता?

उत्तर—अनुभाग बंध में अनंतता है ।

अनुभाग बंध प्रत्येक समय में अनंत गुणा हीन होने पर भी अनंत अनुभाग बंध होता है।

वहाँ प्रत्येक समय में अनंत गुणा हीन होने की स्थिति संभव है ।

परंतु स्थिति बंध असंख्यात समयों प्रमाण ही है ।

उसमें प्रत्येक समय पल्य/संख्यात भाग घटने की संभावना ही नहीं है ।

प्रत्येक समय यदि पल्य/संख्यात भाग घटायेंगे तो संख्यात समयों में ही अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिबंध घट जाएगा, स्थितिबंध शून्य हो जाएगा ।

लेकिन स्थितिबंध तो यहाँ शून्य हो नहीं सकता ।

इसलिए अंतर्मुहूर्त प्रमाण काल में स्थितिबंध पल्य/संख्यात भाग घटता है, प्रतिसमय नहीं घटता है ।

समस्त कर्मों का स्थिति-बंध क्यों घटता है? सिर्फ पाप प्रकृतियों का क्यों नहीं?

क्योंकि 3 आयु को छोड़कर शेष सभी कर्मों की स्थिति पाप-रूप ही है।

आदिमकरणद्धाए, पढमट्ठिदिबंधदो दु चरिमम्हि ।
संखेज्जगुणविहीणो, ठिदिबंधो होइ णियमेण ॥40॥

- अन्वयार्थ:- (आदिमकरणद्धाए) प्रथम अध:प्रवृत्तकरण काल में (पढमट्ठिदिबंधदो दु) प्रथम स्थितिबन्ध से (चरिमम्हि) अंतिम समय में (संखेज्जगुणविहीणो) संख्यातगुणा कम (ठिदिबंधो) स्थितिबन्ध (णियमेण) नियम से (होइ) होता है ॥40॥

अधःप्रवृत्तकरण के आदि, अंत में स्थिति बंध

	प्रारंभ में बंध	अंतिम बंध	विशेष
स्थिति बंध	अंत:कोड़ाकोड़ी सागर	अंत: कोड़ाकोड़ी सागर / संख्यात	अंत में प्रारंभ के स्थिति बंध से संख्यात गुणा हीन स्थिति बंध हो रहा है ।
संदृष्टि	सा अं को 2	सा अं को 2 / ४	४ की संदृष्टि संख्यात के लिए है ।

एक अंतर्मुहूर्त में छोटे-छोटे कितने अंतर्मुहूर्त ?

1 स्थितिबंधापसरण में $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ स्थिति बंध घटता है ।

माना कि संख्यात का प्रमाण 2 है । तो एक बंधापसरण में $\frac{\text{पल्य}}{2}$ घटा । तो एक पल्य घटाने में 2 बंधापसरण हुए ।

1 सागर में 10 कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं तो 1 सागर घटाने में 10 कोड़ाकोड़ी × 2 = 20 कोड़ाकोड़ी बंधापसरण होंगे ।

1 लाख सागर घटाने में 20 कोड़ाकोड़ी × 1 लाख बंधापसरण होंगे ।

1 स्थितिबंधापसरण में 1 अंतर्मुहूर्त लगता है ।

तो 20 कोड़ाकोड़ी × 1 लाख बंधापसरण में 20 कोड़ाकोड़ी × 1 लाख अंतर्मुहूर्त लगते हैं ।

याने 1 लाख सागर घटाने में इतने कोड़ाकोड़ी अंतर्मुहूर्त एक अध:प्रवृत्तकरण में होते हैं, तो वास्तव में कितने अधिक अंतर्मुहूर्त होते हैं!!

तच्चरिमे ठिदिबंधो, आदिमसम्मेण देससयलजमं ।
पडिवज्जमाणगस्स वि, संखेज्जगुणेण हीणकमो ॥41॥

- अन्वयार्थः- (तच्चरिमे) अधःप्रवृत्तकरण के अंतिम समय में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के सम्मुख जीव को जो स्थितिबंध होता है उससे (आदिमसम्मेण) प्रथमोपशम सम्यक्त्व-सहित (देससयलजमं पडिवज्जमाणगस्स वि) देशसंयम और सकलसंयम को प्राप्त होने वाले जीव को (संखेज्ञगुणेण हीणकमो) क्रमशः संख्यातगुणा हीन (ठिदिबंधो) स्थितिबंध होता है ॥41॥

अधःप्रवृत्त करण के अंतिम समय में स्थिति बंध

पद	स्थितिबंध का प्रमाण
चतुर्थ गुणस्थान प्राप्त करने वाले जीव को	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात}}$
देशसंयम (पंचम गुणस्थान) प्राप्त करने वाले जीव को	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात} \times \text{संख्यात}}$
सकलसंयम (सप्तम गुणस्थान) प्राप्त करने वाले जीव को	$\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{\text{संख्यात} \times \text{संख्यात} \times \text{संख्यात}}$

विशेष

प्रथम गुणस्थान से चतुर्थ गुणस्थान प्राप्त करने वाले की विशुद्धि से प्रथम गुणस्थान से पांचवां गुणस्थान प्राप्त करने वाले की विशुद्धि अनंतगुणी होती है । इसलिए उनका स्थितिबंध और हीन होता है ।

इसी प्रकार प्रथम गुणस्थान से पांचवां गुणस्थान प्राप्त करने वाले की विशुद्धि से प्रथम गुणस्थान से सातवां गुणस्थान प्राप्त करने वाले की विशुद्धि अनंत गुणी अधिक होती है । इसलिए उनका स्थिति बंध और हीन होता है ।

आदिमकरणद्धाए, पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
अहियकमा हु विसेसे, मुहुत्तअंतो हु पडिभागो ॥42॥

- अन्वयार्थ:- (आदिमकरणद्धाए) प्रथम करण के काल में (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अहियकमा हु) अधिक क्रम से (असंखलोगपरिणामा) असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम होते हैं ।
- (विसेसे) विशेष अर्थात् चय-प्रमाण को प्राप्त करने के लिए (मुहुत्तअंतो हु) अंतर्मुहूर्त (पडिभागो) प्रतिभाग (भागहार) है ॥42॥

संदृष्टि क्या होती है?

संदृष्टि, सहनानी, चिह्न — ये एकार्थवाची हैं ।

जैसे गणित में जोड़ की संदृष्टि + है, घटाने की संदृष्टि – है वैसे यहाँ परिणाम, शक्ति आदि बताने के लिए संदृष्टि लिखी जाती है । जैसे लोक की संदृष्टि ≡ है ।

अंक संदृष्टि

- वास्तविक संख्याओं को समझने के लिए जो उदाहरण स्वरूप संख्यायें लेकर बताया जाता है वह अंक संदृष्टि है । जैसे अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम 3072 माने ।

अर्थ संदृष्टि

- वास्तविक संख्याओं और तत्संबंधी गणना के करने को अर्थ संदृष्टि कहते हैं । यह पूर्वाचार्यों के द्वारा बताये गये चिह्नों के माध्यम से की जाती है । जैसे अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम ≡∂ हैं ।

अध:प्रवृत्तकरण के परिणामों की अंक संदृष्टि

सर्वधन	3072
ऊर्ध्व गच्छ	16
तिर्यग्गच्छ	4
ऊर्ध्व-विशेष	4
तिर्यक्-विशेष	1
संख्यात की संदृष्टि	3

सर्वधन

सर्वस्थानों संबंधी सारे द्रव्य के जोड़ को सर्वधन कहते हैं ।

जैसे अधःप्रवृत्त करण के सारे परिणामों की संख्या असंख्यात लोक है अथवा अंक संदृष्टि में 3072 मानी है । यह ही सर्वधन कहलाता है । इस सर्वधन को ही विभिन्न समयों में बांटा जाता है ।

गच्छ

स्थानों के प्रमाण को गच्छ कहते हैं ।

गच्छ, पद, स्थान, Number of places — एकार्थवाची हैं ।

इस प्रकरण में गच्छ याने अधःप्रवृत्त करण के समयों की संख्या ।

यह वास्तविक रूप में अंतर्मुहूर्त प्रमाण है तथा अंक संदृष्टि में 16 समय है ।

चय

अधःप्रवृत्तकरण के प्रथम समय के परिणामों से द्वितीय समय के परिणामों का प्रमाण अधिक होता है ।

द्वितीय समय के परिणामों से तृतीय समय के परिणामों का प्रमाण अधिक होता है ।

इस एकरूपता से अधिक होने वाली संख्या को चय कहते हैं ।

प्रत्येक समय के परिणाम इस चय से बढ़ते जाते हैं ।

चय के अन्य नाम प्रचय, विशेष, उत्तर, अधिक हैं ।

चयधन

अधःप्रवृत्तकरण के द्वितीय आदि समयों में एक-एक चय बढ़ता जाता है ।

5	162 + 4 + 4 + 4 + 4
4	162 + 4 + 4 + 4
3	162 + 4 + 4
2	162 + 4
1	162
समय	**परिणामों की संख्या**

सब समयों के इन सभी चयों के जोड़ का ही नाम चयधन है।

जैसे यहाँ द्वितीय समय में 4, तृतीय समय में 8, चतुर्थ में 12, पाँचवे में 16 संख्या चयरूप है। इन सभी के जोड़ को चयधन कहा जाता है।

आदि

प्रथम स्थान के परिणामों की संख्या को आदि कहते हैं ।

जैसे अंक संदृष्टि में प्रथम समय के परिणामों की संख्या 162 है । यही यहाँ पर आदि का प्रमाण है ।

$$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}} = \text{आदि}$$

आदि में एक चय जोड़ने पर द्वितीय समय संबंधी परिणामों की संख्या आती है । इसी प्रकार एक-एक चय जोड़ते हुए अंतिम समय संबंधी परिणामों की संख्या प्राप्त होती है ।

आदिधन

जितना प्रथम स्थान का प्रमाण है,

उतना-उतना प्रमाण सब स्थानों का ग्रहण करके जोड़ करने पर जो प्रमाण होता है

उसे आदिधन कहते हैं ।

5	162 + 4 + 4 + 4 + 4
4	162 + 4 + 4 + 4
3	162 + 4 + 4
2	162 + 4
1	162
समय	**परिणामों की संख्या**

जैसे यहाँ प्रथम स्थान का प्रमाण 162 है । इतनी संख्या शेष सारे समयों में भी है । इन सभी के जोड़ को आदिधन कहते हैं ।

आवश्यक सूत्र

$$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}} = \text{चय}$$

$$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ} = \text{चयधन}$$

$$\text{सर्वधन} - \text{चयधन} = \text{आदिधन}$$

$$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}} = \text{आदि}$$

अंक संदृष्टि: सर्वधन = 3072, गच्छ = 16, संख्यात = 3

चय	$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}}$	$\frac{3072}{16 \times 16 \times 3} = 4$
चयधन	$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$	$\frac{16 - 1}{2} \times 4 \times 16$ $= 15 \times 2 \times 16 = 480$
आदिधन	सर्वधन – चयधन	3072 – 480 = 2592
आदि	$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}}$	$\frac{2592}{16} = 162$

16	222
15	218
14	214
13	210
12	206
11	202
10	198
9	194
8	190
7	186
6	182
5	178
4	174
3	170
2	166
1	162
समय	परिणामों की संख्या

अध:प्रवृत्त करण के परिणामों की रचना (अंक संदृष्टि से)

कुल परिणाम = 3072

समय = 16

चय = 4

www.JainKosh.org

16	162 + (4 × 15)
15	162 + (4 × 14)
14	162 + (4 × 13)
13	162 + (4 × 12)
12	162 + (4 × 11)
11	162 + (4 × 10)
10	162 + (4 × 9)
9	162 + (4 × 8)
8	162 + (4 × 7)
7	162 + (4 × 6)
6	162 + (4 × 5)
5	162 + 4 + 4 + 4 + 4
4	162 + 4 + 4 + 4
3	162 + 4 + 4
2	162 + 4
1	162
समय	परिणामों की संख्या

चयधन का तात्पर्य

आदि (162) से अधिक जो द्रव्य ऊपर-ऊपर अधिक दिया है, उसका जोड़ चयधन है ।

ऊर्ध्व रचना की अर्थ संदृष्टि

सर्वधन = ≡∂, गच्छ = 2೨೨೨, संख्यात = ೨

चय	$\dfrac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}}$	$\dfrac{\equiv\partial}{2೨೨೨\times2೨೨೨\times೨}$
चयधन	$\dfrac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$	$= \dfrac{2೨೨೨-1}{2} \times \dfrac{\equiv\partial}{2೨೨೨\times2೨೨೨\times೨} \times 2೨೨೨$ $= \dfrac{2೨೨೨-1\times\equiv\partial}{2೨೨೨\times೨2}$
आदिधन	सर्वधन – चयधन	$\equiv\partial - \dfrac{\equiv\partial\times2೨೨೨-1}{2೨೨೨\times೨2}$

$$\text{आदिधन} = \equiv \partial - \frac{\equiv\partial\times 2\text{२२२}-1}{2\text{२२२}\times\text{२}2}$$

$$\frac{\equiv \partial\times 2\,\text{२२२}\times\text{२}2}{2\text{२२२}\times\text{२}2} - \frac{\equiv \partial\times(2\,\text{२२२}-1)}{2\text{२२२}\times\text{२}2}$$ (समच्छेद करने पर)

$$\frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times\text{२}2} \times \{2\text{२२२} \times \text{२}2 - (2\text{२२२} - 1)\}$$

$$\frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times\text{२}2} \times (2\text{२२२} \times \text{२}2 - 2\text{२२२} + 1)$$

$$\frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times\text{२}2} \times [\{2\text{२२२} \times (\text{२}2 - 1)\} + 1]$$

आदि	$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}}$	$= \frac{\equiv \partial\times[2\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1]}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times 2\text{२}}$

द्वितीय समय के परिणाम पुंज

प्रथम समय की परिणाम संख्या + चय

$$\frac{\equiv \partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1]}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} + \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}}$$

$$\frac{\equiv \partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1]}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} + \frac{\equiv \partial\times 2}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2}$$ (2 से समच्छेद करने पर)

$$\frac{\equiv \partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1+2]}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2}$$

$$\frac{\equiv \partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+3]}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2}$$

अंतिम समय के परिणाम पुंज

प्रथम समय के परिणाम पुंज + (गच्छ–1) × चय

$$\frac{\equiv\partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1]}{2\text{२२२}\times2\text{२२२}\times\text{२}2}+(2\text{२२२}-1)\times\frac{\equiv\partial}{2\text{२२२}\times2\text{२२२}\times\text{२}}$$

2 से समच्छेद करने पर

$$\frac{\equiv\partial\times[2\,\text{२२२}\times(\text{२}2-1)+1]}{2\text{२२२}\times2\text{२२२}\times\text{२}2}+\frac{(2\text{२२२}-1)\times\equiv\partial\times2}{2\text{२२२}\times2\text{२२२}\times\text{२}\times2}$$

$$= \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} \times [\{2\ \text{२२२} \times (\text{२}2 - 1) + 1\} + (2\text{२२२} - 1) \times 2]$$

$$= \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} \times [2\ \text{२२२} \times (\text{२}2 - 1) + 1 + 2\text{२२२}\times 2 - 2]$$

$$= \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} \times [2\ \text{२२२} \times (\text{२}2 - 1) + 2\text{२२२} \times 2 - 1]$$

2 २२२ कॉमन लेने पर

$$= \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} \times [2\ \text{२२२} \times (\text{२}2 - 1 + 2) - 1]$$

$$= \frac{\equiv \partial}{2\text{२२२}\times 2\text{२२२}\times \text{२}2} \times [2\ \text{२२२} \times (\text{२}2 + 1) - 1]$$

वास्तविक संख्याएँ

अध:प्रवृत्तकरण का काल अन्तर्मुहूर्त है अर्थात् असंख्यात समय

कुल परिणामों की संख्या असंख्यात लोक प्रमाण है ।

चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है ।

एक-एक समय के परिणामों की संख्या भी असंख्यात लोक है ।

अध:प्रवृत्त करण

यद्यपि अध:प्रवृत्त करण के परिणामपुंज असंख्यात लोक हैं, तथापि एक जीव को अध:प्रवृत्त करण में अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही परिणाम होते हैं ।

एक-एक समय के परिणाम असंख्यात लोक हैं, तथापि एक-एक समय में एक जीव को उन असंख्यात परिणामों में से एक ही परिणाम होता है ।

कोई जीव मंद विशुद्धि से करण करे या कोई जीव तीव्र विशुद्धि से करण करे, फिर भी अध:प्रवृत्त करण में समान समय लगता है । सभी का अध:प्रवृत्त करण का काल समान है, अलग-अलग नहीं ।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के लिए प्रारंभ किये करण में जीव का मरण नहीं होता है। करण समाप्त करने के बाद ही मरण हो सकता है ।

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889

- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें ।